50 से 60 प्रतिशत तक ही कर वसूल पाते हैं भारत में नगर निकाय, जबकि शहरों में सबसे बड़ा टैक्स स्रोत संपत्ति कर ही होता है।

रोहित प्रियदर्शी
लोक नीति विश्लेषक

आजकल

शहरीकरण में स्थानीय निकायों की भूमिका

वर्ष 2031 तक देश में शहरी जनसंख्या 60 करोड़ तक पहुंच जाएगी, लेकिन शहरी निकायों की आर्थिक स्थिति चिंता का विषय बनी हुई है। हाल ही में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (कैग) की एक आडिट रिपोर्ट में यह बात सामने आई है कि देश के शहरी स्थानीय निकाय अपनी आवश्यकताओं का 32 प्रतिशत धन ही अपने संसाधनों से जुटा पाते हैं। बाकी के लिए उन्हें राज्य व केंद्र सरकार पर निर्भर रहना पड़ता है। ऐसे में सामाजिक-आर्थिक विकास के प्रमुख केंद्र बन चुके शहरों की विडंबना यह है कि इनका शासन तंत्र पुरानी चुनौतियों से ही जूझ रहा है

शहरों को विकसित करने के लिए स्थानीय स्तर पर संसाधन जुटाने की नगर निकायों के समक्ष चुनौती कायम है। फाइल

बढ़ती आबादी और तीव्र होती शहरीकरण की प्रक्रिया ने भारत के शहरों पर अभूतपूर्व दबाव डाला है। मैकिंसे ग्लोबल इंस्टीट्यूट की रिपोर्ट साफ संकेत देती है कि वर्तमान निवेश दरें शहरी बुनियादी ढांचे की जरूरतों को पूरा करने में असमर्थ हैं। यदि यही स्थिति बनी रही, तो यह शहरी जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करेगा और आर्थिक उत्पादकता में गिरावट ला सकता है। पिछली सदी के नौवें दशक में राष्ट्रीय शहरीकरण आयोग ने सही कहा था कि शहर 'विकास के इंजन' हैं। आज भारत का लगभग 66 प्रतिशत सकल घरेलू उत्पाद और 90 प्रतिशत सरकारी राजस्व शहरों से आता है। इसके बावजूद, विश्व बैंक का आकलन है कि अगले दस वर्षों में भारत को अपनी शहरी अवसंरचना के लिए लगभग 840 अरब डालर की आवश्यकता होगी। यह आंकड़ा स्पष्ट करता है कि यदि हम समय रहते शहरी निवेश को प्राथमिकता नहीं देंगे, तो भारत की आर्थिक प्रगति में भारी बाधा उत्पन्न हो सकती है।

आज भारत में नगर निकायों की हालत चिंताजनक है। नगर निकायों के पास अपने संसाधनों से उतना राजस्व नहीं आता, जितनी जिम्मेदारियां उन पर हैं। अधिकांश नगर निकाय अपनी जरूरत का केवल एक-तिहाई खर्च ही स्वयं वहन कर पाते हैं। बाकी के लिए उन्हें राज्य सरकारों या केंद्र से मिलने वाले अनुदानों पर निर्भर रहना पड़ता है। यह स्थिति स्वशासन की भावना के विपरीत है।

शहरों का अनियोजित विकास : शहरों में सबसे बड़ा टैक्स स्रोत संपत्ति कर होता है, लेकिन उसमें भी नगर निकाय केवल 50-60 प्रतिशत ही वसूली कर पाते हैं। नई कर नीति बनाने या वर्तमान कर दरें बढ़ाने से भी वे हिचकते हैं, क्योंकि चुने हुए प्रतिनिधियों को डर रहता है कि इससे जनता नाराज हो जाएगी। यही कारण है कि शहरी आय में वृद्धि नहीं हो पाती और उनके विकास कार्य ठप पड़ जाते हैं। यह स्थिति तब और जटिल हो जाती है, जब स्थानीय निकायों के पास परियोजनाओं की कोई दीर्घकालिक योजना नहीं होती। जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है, लेकिन उस हिसाब से शहरों की तैयारी नहीं हो रही। नई कालोनियां तो बन जाती हैं, लेकिन उनके साथ स्कूल, अस्पताल, पार्क और परिवहन की सुविधा नहीं होती। जमीन का विवेकपूर्ण उपयोग नहीं हो रहा है और बिना योजना के बस्तियां विकसित हो रही हैं। मलिन बस्तियों की संख्या भी बढ़ रही है और वहां की जीवन स्थितियां बेहद खराब हैं। लिहाजा ट्रैफिक जाम और प्रदूषण जैसी समस्याएं भी बढ़ रही हैं।

लचर प्रणाली : नगर निकायों की प्रशासनिक मशीनरी भी बेहद कमजोर है। कर्मचारियों की भारी कमी है और जो हैं उन्हें नई तकनीकों की जानकारी नहीं होती। कई नगर निगमों में लगभग 30-35 प्रतिशत पद रिक्त हैं। इसका असर योजना बनाने, परियोजनाएं लागू करने और नागरिक सेवाएं देने की गुणवत्ता पर पड़ता है। विशेषज्ञ विभागों की अनुपस्थिति सेवा वितरण को और अधिक जटिल बना देती है। इसके अलावा, राजनीतिक हस्तक्षेप भी नगर निकायों की स्वायत्तता पर भारी पड़ता है। राज्यों की सरकारें कई बार निर्वाचित निकायों को समय से पहले भंग कर देती हैं या चुनाव में जानबूझकर देरी करती हैं। राजनीतिक दलों की खींचतान का असर स्थानीय नीतियों और योजनाओं पर पड़ता है, जिससे आम जनता को लाभ नहीं मिल पाता। नगर निकायों को जो अधिकार संविधान ने दिए थे, उनमें से अधिकांश कागजों में सिमटकर रह गए हैं। वास्तव में, राज्य सरकारें इन निकायों पर हर स्तर पर नियंत्रण बनाए रखती हैं, चाहे वह प्रशासनिक हो, न्यायिक हो या वित्तीय। किसी भी बड़े काम के लिए राज्य की मंजूरी लेनी पड़ती है। यहां तक कि उधार लेने के लिए भी राज्य सरकार की अनुमति जरूरी है। इस कारण स्थानीय निकाय स्वतंत्र निर्णय नहीं ले पाते और उनका विकास धीमा पड़ जाता है।

नीति निर्माण में स्थानीय निकायों को राज्य सरकारों का अधीनस्थ समझे जाने की परंपरा अभी भी चली आ रही है। शहरी विकास को राज्य का विषय माना जाता है, जो राज्यों के राजनीतिक और लोकतांत्रिक समीकरण से अधिक जुड़ा हुआ है। संविधान के 74वें संशोधन में स्थानीय निकायों के सशक्तीकरण के लिए 12वीं अनुसूची के 18 प्रविधानों को उन्हें स्थानांतरित किया गया था। इसमें वित्तीय सशक्तीकरण का कोई उल्लेख नहीं है। केवल उनके ढांचे और भूमि-कानून में लचीलेपन के साथ नगरों में आपसी प्रतिस्पर्धा के साथ निवेश को बढ़ाना ही इसका उद्देश्य रहा।

आगे की राह : आज आवश्यकता इस बात की है कि शहरी शासन को केवल प्रशासनिक ढांचे की तरह नहीं, बल्कि लोकतांत्रिक सशक्तीकरण के केंद्र के रूप में देखा जाए। केरल का उदाहरण यह दिखाता है कि जब स्थानीय स्तर पर विकेंद्रीकरण को सही दिशा में लागू किया जाए, तो यह विकास और जनसहभागिता दोनों के लिए उपयोगी साबित होता है। शहरों को जलवायु परिवर्तन के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए उन्हें बेहतर डाटा प्रणाली, तकनीकी संसाधनों और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। विशेषकर हाशिए पर मौजूद समुदायों के लिए योजनाएं बनाते समय ये आंकड़े निर्णायक भूमिका निभा सकते हैं। इसके साथ ही, केंद्र सरकार को शहरी निकायों को दिए जाने वाले अनुदान में वृद्धि करनी चाहिए तथा उन्हें अपने हिसाब से विकास का प्रारूप तैयार करने का अवसर देना चाहिए। लोकतंत्र का आत्मा जनसहभागिता में है, अतः निर्णय प्रक्रिया में आम नागरिकों की भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। इसके अलावा, मेयर और अन्य प्रमुख पदाधिकारियों का कार्यकाल बढ़ाकर उनके कार्यों में निरंतरता और जवाबदेही सुनिश्चित की जा सकती है।

आज आवश्यकता इस बात की भी है कि शहरी निकायों को असली ताकत मिले। उन्हें राजस्व अर्जित करने के स्वतंत्र अधिकार दिए जाएं और प्रशासनिक स्वायत्तता प्रदान की जाए। साथ ही, तकनीकी संसाधनों और मानव संसाधनों की भारी कमी को दूर किया जाए, ताकि वे अपनी जिम्मेदारियां बेहतर ढंग से निभा सकें। जब तक नगर निकाय आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं बनते और उन्हें राजनीतिक दबावों से आजादी नहीं मिलती, तब तक शहरी भारत की तस्वीर सुधरना मुश्किल है।

बेहतर भविष्य की दिशा में बढ़ते कदम

भारत में तीव्र शहरीकरण ने एक ओर विकास और अवसरों के द्वार खोले हैं, तो वहीं दूसरी ओर बुनियादी ढांचे, स्वास्थ्य, आवास और पर्यावरणीय चुनौतियों को भी बढ़ा दिया है। राष्ट्रीय तथा राज्य सरकारें इन चुनौतियों से निपटने के लिए अनेक पहल शुरू कर चुकी हैं। इन पहलों के तहत शहरों में जीवन-स्तर को बेहतर बनाना, स्वच्छता सुनिश्चित करना और समावेशी विकास को प्रोत्साहित करना मुख्य उद्देश्य रहे हैं। देश में शहरी उत्थान की दिशा में महत्वपूर्ण योजनाएं स्मार्ट सिटी मिशन, पीएम आवास योजना, स्वच्छ भारत मिशन-शहरी और अमृत जैसी योजनाएं हैं, जिनका असर जनजीवन पर दूरगामी साबित हो रहा है।

स्मार्ट सिटी मिशन की शुरुआत वर्ष 2014 में की गई थी। इसका मुख्य लक्ष्य 100 चुनिंदा शहरों को अत्याधुनिक बुनियादी ढांचे, संचारित एवं संवहनीय परिवहन, साफ-सुथरा वातावरण, डिजिटल सुविधाएं और बेहतर शहरी सेवाएं प्रदान करके वहां के नागरिकों को सम्मानजनक एवं गुणवत्तापूर्ण जीवन देना है। इस मिशन के अंतर्गत हर शहर को 'स्मार्ट समाधान' के लिए एक समग्र योजना तैयार करनी होती है, जिसमें सड़क, बिजली, जलापूर्ति, सीवर सेवाएं, कचरा प्रबंधन, सार्वजनिक स्थानों का विकास और डिजिटल प्रौद्योगिकी के माध्यम से पारदर्शिता बढ़ाने सहित अनेक आयाम शामिल होते हैं। शहरी सफाई और स्वच्छता के मामले में स्वच्छ भारत मिशन-शहरी एक क्रांतिकारी कदम साबित हुआ है। वर्ष 2014 में आवासन और शहरी कार्य मंत्रालय द्वारा शुरू की गई इस पहल का उद्देश्य शहरी क्षेत्रों में कचरा प्रबंधन, सफाई और सार्वजनिक स्थलों पर स्वच्छता बनाए रखना है। इस मिशन ने शौचालय निर्माण, कचरा संग्रहण-निपटान व्यवस्था, पुनर्चक्रण और नागरिकों में स्वच्छता जागरूकता कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी है। इससे न केवल शहरों की तस्वीर बदली है, बल्कि स्वास्थ्य और पर्यावरण के स्तर में भी सुधार आया है। वर्तमान में लाखों लोगों को स्वच्छ सुविधाएं मिल रही हैं, कूड़ा-कचरा प्रबंधन केंद्र विकसित हो रहे हैं, और खुले में शौच की प्रथा में उल्लेखनीय कमी आई है।

जल आपूर्ति और सीवरेज कनेक्शन के मामले में कायाकल्प और शहरी परिवर्तन के लिए अटल मिशन यानी अमृत योजना ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वर्ष 2015 में शुरू की गई इस योजना का मुख्य उद्देश्य था कि हर घर में जल का निर्बाध कनेक्शन सुनिश्चित हो और सीवरेज कनेक्शन भी उपलब्ध कराया जाए। इसके तहत जल स्रोतों का संवर्धन, पाइपलाइन विस्तार, जल संरक्षण, स्मार्ट मीटरिंग और नाला सुधार जैसे कार्य किए जा रहे हैं। अमृत योजना के जरिए स्थानीय निकायों को वित्तीय सहायता देने के साथ तकनीकी मार्गदर्शन भी प्रदान किया जाता है। इसका प्रभाव तब स्पष्ट होता है, जब हम देखते हैं कि लाखों घरों को स्वच्छ जल मिल रहा है और शहरों का सीवरेज नेटवर्क सुधरने से महामारी जनित बीमारियों में भारी गिरावट आई है।

इन पहलों का प्रभाव तभी ठोस होगा, जब उनके क्रियान्वयन में नागरिकों की भागीदारी और सरकारी स्तर पर निरंतर निगरानी बनी रहे। हालांकि चुनौतियां अभी कायम हैं। बजट आवंटन में वृद्धि, स्थानीय निकायों की आर्थिक सुदृढ़ता, प्रदूषण नियंत्रण के लिए निरंतर निगरानी और कमजोर वर्गों को और अधिक प्रत्यक्ष लाभ प्रदान करने के लिए योजनाओं का सटीक अनुपालन आवश्यक है। (रोहित प्रियदर्शी)

खरी-खरी

हम देर करते नहीं, देर हो जाती है

ऋषभ जैन

देर से पूर्ण होना हमारी परियोजनाओं की स्वर्णिम परंपरा रही है। विलंब उन्हें इतना प्रिय है कि इसके लिए हमारी परियोजनाएं प्रारंभ होने का इंतजार नहीं करतीं, वे प्रारंभ ही विलंब से होती हैं। विलंब से स्वीकृत होना, विलंब से शुरू होना और विलंब से पूर्ण होना परियोजनाओं के मूलभूत अधिकार हैं। इन अधिकारों का उपयोग योजनाएं इतनी कुशलता से करती हैं कि विलंब के लिए जिम्मेदार कारक का ढूंढा जाना असंभव रहता है। जनता विलंब के लिए ठेकेदार को, ठेकेदार लेआउट न देने के लिए इंजीनियर को, इंजीनियर भू-अर्जन न कर पाने के लिए उस विभाग वालों को और भू-अर्जन वाले जमीन देने में हीलाहवाली के लिए जनता को दोषी ठहराते रहते हैं।

ऐसा नहीं है कि विलंब के जिम्मेदार का पता हमेशा ही न चलता हो। कई बार इसकी खबर हो भी जाती है। तब घोषित किया जाता है कि काम पूरा नहीं हो पाने के कसूरवार इंद्रदेव हैं और अगर वे बादलों पर नियंत्रण रखते तो सारे लोग उसे समय के पहले निपटाने मुस्तैद बैठे थे। इंद्रदेव के अलावा हरियाली देवी भी परियोजनाओं को लटकवाने में बहुत रुचि लेती हैं। हरे-भरे पेड़ ठीक वहीं मिलते हैं, जहां बांध या पुल आदि बनाया जाना हो। पेड़ जरूरी या परियोजना, इसकी तनातनी में जीत प्रायः परियोजना की होती है। बनाने वाले पर्यावरण पोषक दिख सकें, इसके लिए परियोजनाएं स्वयं विलंबित होने का कलंक झेल लेती हैं।

हमारी परियोजनाएं प्रायः इतनी विलंबित हो जाती हैं कि उनके पूरा होते-होते जनसंख्या उससे भी ज्यादा हो जाती है, जितने के लिए वह बनाई गई थी। इस गुण के कारण योजना पूरा होने के पहले ही उसकी आवर्धन योजना बनानी पड़ती है। यह प्रक्रिया सतत चलती रहती है।

अधिकारी, अभियंता, नेता सभी अपना कार्य मुस्तैदी से करते हैं, फिर भी योजनाएं पूरी होने में देर कर देती हैं। इससे सिद्ध होता है कि देरी के लिए योजनाएं स्वयं ही जिम्मेदार होती हैं। हालांकि उनसे पूछें तो वे भी यही कहेंगी कि हम देर करते नहीं, देर हो जाती है...

पोस्ट

अहमदाबाद में बोइंग विमान दुर्घटना पूरे देश को हिला देने वाली है। इस त्रासदी का विवरण शब्दों से परे है।
अवधेश कुमार@Awadheshkum

अहमदाबाद में मेडिकल कालेज के जिस हास्टल पर विमान गिरा, उस वक्त वहां छात्र लंच कर रहे थे। बहुत दुखद।
नवनीत मिश्रा@navneetmishra99

चूंकि ड्रीमलाइनर विमान का हादसों से जुड़ा कोई इतिहास नहीं रहा, इसलिए बोइंग को इसकी तह में जाना चाहिए कि ऐसा कैसे हुआ। उम्मीद है कि अमेरिकी संस्था नेशनल ट्रांसपोर्टेशन सेफ्टी बोर्ड इस दुर्घटना के कारणों की पहचान में एअर इंडिया और नागर विमानन प्राधिकरण की हरसंभव सहायता करेगी।
नवरूप सिंह@TheNavroopSingh

हवाई यात्रा सबसे सुरक्षित मानी जाती है, पर अहमदाबाद हादसे से इस भरोसे को धक्का लगेगा। गहन जांच से ही इस भरोसे की बहाली संभव है। देश में विमानों की खस्ताहालत की शिकायतें अक्सर आती रहती हैं, उन पर भी ध्यान देना होगा। इस हादसे की जिम्मेदारी भी तय होनी चाहिए।
सौरभ त्रिपाठी@Saurabh_LT

जागरण जनमत कल का परिणाम

आपरेशन सिंदूर के बाद विदेश भेजे गए प्रतिनिधिमंडल अपने उद्देश्य में सफल रहे?

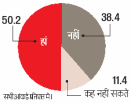

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल

क्या अहमदाबाद विमान दुर्घटना हवाई यात्रा की सुरक्षा को लेकर संदेह पैदा करने वाली है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

निर्मम काहे हो गया इतना तू भगवान,
आकर धरती पर गिरा उड़ता हुआ विमान।
उड़ता हुआ विमान आग का बनकर गोला,
ज्यों सुरसा सी आय मौत ने हो मुंह खोला।
दु:ख के क्षण हैं आज न देखा जाता यह गम,
जाने क्यूं भगवान हो गया इतना निर्मम!
- ओमप्रकाश तिवारी

शशि शेखर
संपादकीय प्रभारी, रांची

झारखंड डायरी

खनिजों से खुल रहे संभावनाओं के द्वार

देश में कोयला उत्पादन में झारखंड विशिष्ट स्थान रखता है। यहां करीब 200 खदानें सालाना 15.6 करोड़ टन कोयला उत्पादन करती हैं। लोहा, बाक्साइट, पत्थर जैसे अन्य खनिज भी यहां बहुतायत में हैं। कुछ स्थानों पर यूरेनियम भी है। हालांकि यहां की अर्थव्यवस्था में इन खनिजों का उस अनुरूप योगदान नहीं हो पाता है, जैसा होना चाहिए। कोयले की रायल्टी को लेकर केंद्र और राज्य में लंबे समय से खींचतान भी चल रही है। राजनीति से इतर यह सवाल जमीनी जरूरतों से भी जुड़ा है।

इस बीच जर्मनी के राजदूत ने रांची में झारखंड के मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन से मुलाकात के दौरान झारखंड में कोयला खनन और उत्पादन में रुचि दिखाई है। उन्होंने मुख्यमंत्री को बताया कि कोयला मामले में जर्मनी और झारखंड में काफी समानताएं हैं। ऐसे में कोयला आधारित उद्योगों के विकास को लेकर झारखंड के साथ जर्मनी सहयोग बढ़ाने को इच्छुक है। उसकी इस क्षेत्र में विशेषज्ञता भी है। मुख्यमंत्री ने झारखंड में औद्योगिक निवेश की संभावनाओं से जर्मनी के राजदूत को अवगत कराया। उन्होंने कहा कि इस दिशा में राज्य सरकार देश-विदेश के औद्योगिक समूहों के साथ लगातार संपर्क स्थापित कर रही है और इसके सकारात्मक परिणाम भी सामने आ रहे हैं।

मुख्यमंत्री ने जर्मन राजदूत से कहा कि झारखंड में निवेश करने वाले जर्मन निवेशकों को सरकार पूरा सहयोग करेगी। इससे पहले विदेशी निवेश को लेकर मुख्यमंत्री ने हाल ही में स्पेन यात्रा की थी और वहां के निवेशकों से संवाद कर उन्हें झारखंड में निवेश करने के लिए आग्रह किया था। विदेशी निवेश की संभावनाएं और निवेशकों की यहां उद्योग लगाने में बढ़ती रुचि आने वाले दिनों में झारखंड के सुनहरे भविष्य की पटकथा लिख सकती है।

प्रदेश में खनन नीति को बेहतर बनाने से बड़ी संख्या में हो सकता है रोजगार सृजन। फाइल

एक अनुमान के मुताबिक झारखंड में 72.2 अरब टन कोयला भंडार है, जो 12 प्रमुख कोयला क्षेत्रों में वितरित है। झरिया कोलफील्ड भारत का सबसे बड़ा कोयला क्षेत्र है, जिसमें 19.4 अरब टन कोकिंग कोल का अनुमानित भंडार है। कोकिंग कोल सर्वोत्तम गुणवत्ता का कोयला होता है, जो हर जगह नहीं मिलता। इसमें राख की न्यूनतम मात्रा होती है। इस कोयले का उपयोग बिजली उत्पादन में किया जाता है। जबकि झारखंड में मिलनेवाले कोयले में बड़ी मात्रा हार्ड कोल की होती है, जिसका उपयोग धमन भट्ठियों में नहीं किया जा सकता। उनमें साफ्ट कोक या कोकिंग कोल का ही इस्तेमाल होता है। कोयले का उत्पादन बढ़ाकर बिजली की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने का रास्ता भी तैयार हो सकता है।

अप्रैल महीने में झारखंड ने सर्वाधिक कोयला राजस्व प्राप्त कर वित्तीय वर्ष 2025 की बेहतर शुरुआत की है। कोल इंडिया की ओर से भुगतान किए गए कुल राजस्व में झारखंड को 27.58 प्रतिशत प्राप्त हुआ है। कोयला मंत्रालय द्वारा कोल इंडिया की ओर से भुगतान किए राजस्व पर जारी रिपोर्ट के अनुसार अप्रैल 2025 में कोल इंडिया ने विभिन्न मद में 5066.61 करोड़ राजस्व का भुगतान किया। इससे अनुमान लग सकता है कि झारखंड में कोयला उत्पादन करने में जर्मनी की रुचि क्यों है। जर्मनी झारखंड सरकार के साथ कोल उत्पादन में मदद करता है तो इससे तकनीकी दृष्टि से ही नहीं, बल्कि रोजगार सृजन और आर्थिक विकास में भी तेजी आएगी।

हाल के दिनों में झारखंड ने खनन के क्षेत्र में तेजी दिखाई है, लेकिन अभी खनन नीति को बेहतर बनाने से लेकर खनन की तकनीक उन्नत करने तथा खान सुरक्षा पर काफी काम करने की जरूरत है। इस क्षेत्र में लाखों लोगों के लिए रोजगार का सृजन भी हो रहा है। वहीं भारतीय अर्थव्यवस्था में भी इसका बड़ा योगदान रहा है। राज्य में दो से तीन प्रतिशत खदानें भूमिगत हैं, जिनमें अधिकांश बंद हैं, उन्हें अपग्रेड करके हम तकनीक के सहारे फिर से आरंभ कर सकते हैं। ऐसा होने से बड़ी संख्या में रोजगार भी सृजित किया जा सकता है।

मंथन

प्रेम प्रकाश
वरिष्ठ पत्रकार

'स्व' बोध से लैस इतिहास लेखन

राजनीतिक-सामाजिक स्थिति में हुए बदलाव को देखते हुए हमें अपने इतिहास लेखन की पुन: समीक्षा करनी चाहिए, ताकि उसके साथ हुए अन्याय या ज्यादतियों को सुधारा जा सके

प्रतीकात्मक

बीते एक दशक में देश में जो राजनीतिक-सामाजिक स्थिति बनी है, उससे अतीत और इतिहास की मिट्टी पलटते हुए अपनी पहचान को सुदृढ़ देखने की मनोदशा स्वाभाविकता में तब्दील हुई है। ऐसे में इतिहास लेखन और इतिहास दृष्टि को लेकर बात भी नए सिरे से करने की जरूरत है। सवाल है कि इतिहास के पुनर्लेखन और साक्ष्यों के पुनर्परीक्षण के जरिए हम अपने अतीत बोध को किसी नए और वैकल्पिक सांचे में गढ़ रहे हैं या फिर औपनिवेशिक मानसिकता से लैस लीक पर ही आगे बढ़ रहे हैं।

यह भी कि इतिहास लेखन में व्यक्तिपरक दृष्टिकोण की आशंका बनी रहती है। इस बात से कहीं इन्कार नहीं कि भारत का प्रचलित आधुनिक इतिहास मुस्लिम आक्रांताओं, अंग्रेजी शासन और वामपंथी विचारधारा से जुड़े इतिहासकारों की देन है। मुस्लिम आक्रांता ऐसे देशों से आए थे, जहां जीवन जीने के लिए पर्याप्त साधन नहीं थे। भारत की संपन्नता और वैभव उन्हें आकर्षित करता था। ऐसे मुस्लिम शासकों में भारतीय समाज और धर्म को लेकर उदारता-अनुदारता का कंपास अलग-अलग हो सकता है, पर इससे उनके मूल ध्येय में अधिक अंतर नजर नहीं आता।

अंग्रेजों की औपनिवेशिक दृष्टि में ईसाई मत को लेकर उनका परम भाव सबसे महत्वपूर्ण रहा। अपने मत को उन्होंने लगभग मानवता और मानव सभ्यता के बरक्श खड़ा कर दिया। औपनिवेशिक विस्तार के साथ ईसाइयत ने पश्चिमी सभ्यता को शिक्षा, व्यापार और शासन व्यवस्था के नए तरीके से सुदृढ़ीकरण के रूप में मजबूती दी। भारत में पुराने शिक्षा संस्थानों से लेकर शासन पद्धति और कानूनों में आज भी यह छाप नजर आती है। इस दौर में भारतीय संस्कृति और सभ्यता को उसके 'स्व' से रणनीतिक तौर पर विमुख किया गया।

बात करें वामपंथी इतिहासकारों के उदय और खासतौर पर आजादी के समय और उसके बाद सरकारी संस्थानों में उनके प्रभावी होने की तो ऐसे लोगों ने भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण का उपयोग पाश्चात्य दृष्टि से ही किया। उन्होंने तथ्यों और घटनाओं का विश्लेषण एवं व्याख्या खासतौर पर अपने विचारपंथ को फैलाने के लिए किया। इसके लिए उन्होंने भारतीय चिंतन को घटिया तक साबित किया, ताकि नई प्रस्थापनाएं लोगों के मन-मस्तिष्क को घेर सकें। इस बाबत कार्ल मार्क्स का कथन खासा रोचक है, 'ब्रिटिश भारत में चाहे कितने भी निर्दयी रहे हों, भारत के लिए समाधान केवल उसके पश्चिमीकरण में ही है, जो विजेता यूरोपीय श्रमिक वर्ग के द्वारा ही संभव है।'

इतिहास लेखन और उसके बोध को लेकर इन तमाम स्थितियों के बीच बात वर्तमान चिंताओं की करें तो आज हम पूर्व के अन्याय और ज्यादतियों से निकलने के बजाय उसकी छाया में खड़े होकर अपनी नाराजगी जता रहे हैं। यह एक निहायत बचकानी स्थिति है। दरअसल, अपने इतिहास में अपने 'स्व' की खोज के लिए हमें ज्यादा गंभीर होने की जरूरत है। इस दिशा में कुछ काम पहले हुए हैं, जो भारत के लिए जरूरी इतिहास बोध को दिशा देते हैं। इस दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण नाम है इतिहासकार डा. धर्मपाल का। उनकी लिखी एक छोटी सी पुस्तिका है- भारतीय चित्त, मानस और काल। इसमें डा. धर्मपाल वैसी तमाम मानसिकता से मुक्त होने की दरकार सामने रखते हैं, जो हमें अतीत के गौरव से दूर करती है।

डा. धर्मपाल द्वारा इकट्ठा किए गए ब्रिटिश दस्तावेजों से साबित होता है कि अंग्रेजों ने भारत के इतिहास को जानबूझकर तोड़ा-मरोड़ा है। मसलन, 1822-25 के मद्रास प्रेसीडेंसी में किए गए सर्वे के अनुसार, उस समय वहां 11,575 स्कूल और 1,094 कालेज थे। इनमें क्रमशः 1.57 लाख और 5.4 हजार विद्यार्थी पढ़ रहे थे। इन दस्तावेजों में जातिगत बनावट के बारे में भी हैरान करने वाले आंकड़े सामने आते हैं, जिनके अनुसार तमिल भाषी क्षेत्र में निम्न जातियों से संबंधित 70 से 80 प्रतिशत विद्यार्थी थे, उड़िया क्षेत्र में 62 प्रतिशत, मलयालम भाषी क्षेत्रों में 54 प्रतिशत और तेलुगु क्षेत्रों में 50 प्रतिशत थे। यही बात तकनीकी ज्ञान के बारे में भी लागू होती है।

उत्तर प्रदेश के अतिरंजी-खेड़ा में 12वीं शताब्दी ईसा पूर्व में लोहे का प्रयोग होता था और 18वीं शताब्दी तक बढ़िया किस्म का इस्पात बनाया जाता था। उस समय प्रति वर्ष उच्च कोटि का इस्पात बनाने वाली कम-से-कम दस हजार ऐसी भट्ठियां कार्यरत थीं, जो साल में बीस टन तक इस्पात तैयार करती थीं। उस दौर में चेचक के इलाज के लिए टीकाकरण (इनोक्युलेशन) तक किया जाता था और प्लास्टिक सर्जरी द्वारा अंग मरम्मत भी की जाती थी। सुश्रुत के सदियों बाद 18वीं शताब्दी तक यह विद्या मौजूद थी। यह तथ्य भारतीय सिविल सेवा के एक अफसर डा. बैरी द्वारा पुने में उनके द्वारा देखे गए एक आपरेशन के वर्णन से उजागर होता है।

गौरतलब है कि इतिहासकार डा. धर्मपाल ने भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी और ब्रिटिश प्रशासन से जुड़े अफसरों द्वारा किए गए सर्वेक्षणों के रिकार्ड ब्रिटिश संग्रहालयों से खोजकर, ब्रिटिश-पूर्व भारतीय इतिहास का एक छिपा हुआ पक्ष सामने लाया। वर्तमान इतिहास लेखन में भारतीय दृष्टि की स्थापना के लिए इसे उपयोग में लाया जाना चाहिए। यह विवेक देश के विद्वत समाज के बीच विकसित होनी चाहिए कि विरासत के साथ विकास का विजन भी तभी रंग दिखाएगा, जब हम इतिहास लेखन की प्रक्रिया का लक्ष्य और कंपास 'स्व' की खोज पर स्थिर करेंगे। भारतवर्ष का अतीत ज्ञान के संचित अनुभवों का बड़ा जखीरा है, इससे होकर गुजरने में भटकाव का खामियाजा देश और न भुगते, यह हमारे समय की सबसे बड़ी दरकार है।

****